International Journal of Advanced Educational Research
www.educationjournal.org
ISSN: 2455-6157
Received: 08-09-2021, Accepted: 25-09-2021, Published: 09-10-2021
Volume 6, Issue 5, 2021, Page No. 19-24

गजानन माधव 'मुक्तिबोध' की कविताओं में केंद्रित समाज

डॉ. प्रवीण देशमुख
सहयोगी प्राध्यापक व हिन्दी विभाग-प्रमुख, गुलाम नबी आजाद कला, वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, बार्शीटाकली, अकोला, महाराष्ट्र, भारत

सारांश
विशेष रूप से हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल में जब हम प्रगतिशील रचनाकारों को लेकर चर्चा करते है तो साहित्यकार मुक्तिबोध इन रचनाकारों की पंक्ति में विराजित दिखाई देते है । रचनाकार मुक्तिबोध के साहित्य का प्रमुख केंद्रबिंदु समाज रहा है । मुक्तिबोध की लगभग सभी कविताएँ समाज में स्थापित ऐसे लोग जो दिखाई कुछ देते है, और कार्य कुछ और करते है । मुक्तिबोध ने अपनी कविताओं के माध्यम से समाज में प्रगतिशील जीवन मूल्यों की संकल्पना की बात की । मुक्तिबोध हमें अपने साहित्य में सौंदर्य चेतना और जीवनानुभव के अंत: संबंधो को प्रमुखता से स्पष्ट करते दिखाई देते हैं । मुक्तिबोध की लगभग सभी कविताएँ समाज में स्थापित ऐसे लोग जो दिखाई कुछ देते है, और कार्य कुछ और करते है । मुक्तिबोध ने अपनी कविताओं के माध्यम से समाज में प्रगतिशील जीवन मूल्यों की संकल्पना की बात की । मुक्तिबोध उन साहित्यकारों में से एक रहे है, जिन्होंने स्वयं की चिंता छोड़ समाज तथा साहित्य की चिंता की है । मुक्तिबोध का सम्पूर्ण जीवन संघर्षों से पूर्ण रहा है । एक जनवादी रचनाकार के रूप में मुक्तिबोध ने अपना साहित्य सृजित किया ।

मूल शब्द: प्रतीक, पूंजीवादी व्यवस्था, बीम्ब, वर्तमान प्रासंगिकता, फैंटेसी, सामाजिकता

प्रस्तावना

हिन्दी के आधुनिक कविता में बहुमुखी प्रतिभा के धनी एवं साहित्य की विविध विधाओं तथा आयामों को सृजित कर एक नवीन संचेतना तथा दृष्टिकोण देने का महत्वपूर्ण कार्य एवं हिन्दी साहित्य जगत को विरासत के रूप में देने का काम गजानन माधव 'मुक्तिबोध' ने किया । भविष्य में सजगता के साथ-साथ कवि, लेखक व आलोचक इससे संबंधित कार्य निरन्तर कर रहें है । गजानन माधव 'मुक्तिबोध' ने समाज के सामने सीधे 'पूंजीवादी व्यवस्था में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का खुला दस्तावेज प्रस्तुत कर देते है ।

पूंजीवादी व्यवस्था
कविता में कहने
की आदत नहीं पर कह दूँ
वर्तमान समाज में चल नहीं सकता ।[1]

यदि हम गौर से मुक्तिबोध के समग्र साहित्य को गहराई से देखे तो उसमें निहित स्पष्ट दिखाई देता है कि, उन्होंने केवल तत्कालीन समाज की समस्या को कविता में ही उभारा ऐसा नहीं तो बल्कि, स्वयं उस समस्या से जूझते हुए मूल समस्या के यथार्थ स्वरूप को अपनी कविताओं के द्वारा लोगों को उससे सचेत भी किया । मुक्तिबोध ने स्वयं के आत्मसंघर्ष तथा समाज के

विघटित मूल्यों को सही दृष्टिकोण से अवलोकन कर उन्हें अपनी कविताओं में सहज एवं मार्मिकता से अत्यंत मौलिकता एवं प्रवाहमयी रूप से प्रस्तुत किया । मुक्तिबोध का समग्र साहित्य एक प्रकार से उनकी मौलिक विचारात्मकता और गहरा चिंतन एवं संवेदना का प्रतिफल रहा है । जिसमें मुख्यतः उनकी बेचैनी एवं बौद्धिक संघर्ष के आमूलाग्र दर्शन सहजता से होते है । जैसे- उनका सारा जीवन एक मुठभेड़ है । मुक्तिबोध का साहित्य भी उस यथार्थ से मुठभेड़ की एक अटूट प्रक्रिया है, जिससे जूझते हुए वे नष्ट हो गए । कविता, कहानी, उपन्यास, डायरी, आलोचना साहित्य की लगभग हर विधा में जाकर उन्होंने अपने अनुभवों को समझने उसकी परिभाषा करने और उसे अर्थ देने का प्रयत्न किया ।[2]

अर्थात जड़ व्यवस्था के विद्रूप स्वरूप को बदलने के लिए अभिव्यक्ति के सारे खतरों से गुजरना होगा, इसमें विश्वास रखनेवालों में से एक थे गजानन माधव 'मुक्तिबोध'। मुक्तिबोध ने पद्य के साथ-साथ गद्य में भी विपुल मात्रा में सृजन कार्य किया, जिनमें उपन्यास, कहानी का मुख्यता समावेश रहा है । उनके लेखनी से निकला हुआ समग्र साहित्य प्रतिबद्धता एवं जीवन मूल्यों व जीवनानुभवों की सच्चाई का दस्तावेज रहा है । मुक्तिबोध की अधिकांश कविताएँ लम्बी रही है, बहुत काम ऐसी कविताएँ रही है, जो छोटी कविताएँ रही है । उनमें से 'भूल गलती' एक ऐसी ही कविता है,जिसके माध्यम से मुक्तिबोध हमें विचार व स्थापत्य की दृष्टि से उनकी सफलतम कविताओं में प्रतिष्ठित रही है । उनकी कविताएँ विशेषता तिलस्मी, ऐय्यारी तथा अद्भुत चमत्कारों, चित्रों, भयावह डरावनी सूरतो, आतंक एवं दहशत से परिपूर्ण रही है । मुक्तिबोध विशेषत अपने अनुभवों को बिम्बों, प्रतीकों एवं फैंटेंसी के अनार्गत निहित करते है ।

भूल-गलती/ आज बैठी है जिरह बख्तर पहनकर
तख्त पर दिल के/ सब कतारे/ बेजुवाँ बेबस
सलाम में, अनगिनत खम्भो व मेहराबो थमें/
दरबारें-आम में ।[3]

सामान्यतः भूलगलती को आम-जिन्दगी में जितना हल्केपन से लिया उतना ही मुक्तिबोध ने यहाँ उतना ही गम्भीर स्वरूप में लिया है । मुक्तिबोध का व्यक्तिगत जीवन बड़ा ही संघर्षों से भरा हुआ रहा । उनका जीवन एक प्रकार से संघर्षों का अटूट सिलसिला था, जिसमें वह लगातार, निरन्तर आन्तरिक एवं बाहय स्तर पर संघर्षों से जूझते रहें है।

जीवन की तथाकथित
सफलता को पाने की
हमको फुरसत नहीं
खाली नहीं हम
बहुत बिजी है हम ।[4]

यदि मुक्तिबोध के जीवन को गहराई से अवलोकन करने पर यह स्पष्ट दिखाई देता है कि, सादा जीवन उच्च विचार तथा क्षमता शील स्वभाव के थे ।

मुक्तिबोध ने अपना समग्र साहित्य जीवन की गहराई में डूबकर लिखा । मुक्तिबोध मूल रूप रूप से कवि थे, यदि गौर से साहित्य देखे तो नजर आता है कि, उन्होंने अधिकांश पद्य रचनाएँ सृजित की ।

तारसप्तक में सामाजिक रुढ़ियो और जीवन संघर्ष की तथ्यात्मक प्रचिति मुक्तिबोध में रहीं है, वैसे देखा जाय तो अन्यत्र दुर्लभ रही है । 'दूरतारा' कविता में शुन्य के नीले अविस्तार में तारों की गिनती को उदय और अस्त के इतिहास में मापा गया है - जैसे -

तीव्र गति । अतिदूर तारा,
वह हमारा
शून्य के विस्तार नीले में चला है,
और नीचे लोग ।
उसको देखते हैं, नापते हैं गति उदय और अस्त का इतिहास ।[5]

जीवन में सदा वैषम्य और विविध विसंगतियों से निरंतर रूप से जारी संघर्षों से जीवन यापन करने वाले कवि मुक्तिबोध की मानसिकता का भी परिचय इन कविताओं में हो जाता है ।
'चाँद का मुह टेढ़ा है' इस काव्य संग्रह में हम देखते है, कि बेईमानी भूल तथा गलतियों का एक निरन्तर सिलसिला चारों और फैला हुआ दिखाई देता है । कवि की वैचारिक क्षमता तथा मुख्य रूप से आत्मसंघर्ष के माध्यम से बाह्य भौतिक जगत उनकी कविताएँ धूप छाँह की तरह क्षण-क्षण रंग और संदर्भों के साथ बदलती रहती है । कभी वह स्वप्न में चलती है, तो दूसरे पल वह स्वप्न टूटने पर यथार्थ में दिखाई देती है ।

सच्चाई के सुनहले तेज अक्सों के धुधल के में ।
मुहैय्या कर रहा लश्कर । हमारी हार का बदला चुकाने आयेगा ।
संकल्प धर्म चेतना का रक्त प्लावित स्वर
हमारे ही ह्रदय का गुप्त स्वर्णाक्षर, प्रकट होकर निकट हो जायेगा ।[6]

'ब्रह्मराक्षस' कवि मुक्तिबोध के अवचेतन मानस का प्रतीक है जिसे प्रमुखता से कवि व्यक्तिगत दृष्टिकोण से व्यष्टि और समष्टि दोनों की त्रासदी का प्रतीक बना देते है । उनका मानना है कि, इस पूंजीवादी संस्कृति में धन की प्रबल ताकत है ।

किन्तु युग बदला व आया कीर्ति व्यवसायी ।
व धन में से ह्रदय मन ।
और धन अभिभूति अंत: करण में से ।
सत्य की साईं निरन्तर चिलचिलाती थी ।[7]

मुक्तिबोध की कविताएँ अद्भुत संकेतों-भरी, जिज्ञासाओं से अस्थिर-कभी दूर से ही शोर मचाती है । पता नहीं-----कविता में -

पता नहीं कब, कौन, कहाँ किस और मिले,
साँझ मिले, किस सुबह मिले !!
यह राह ज़िन्दगी की
जिससे जिस जगह मिले
है ठीक वहीं, बस वहीं अहाते मेंहदी के
जिनके भीतर
है कोई घर ![8]

अर्थात कवि मुक्तिबोध यहाँ पर एक प्रकार से भविष्य को लेकर चिंतित दिखाई देते है । जहाँ उनके अनुसार जीवन में सबकुछ जैसे अनिश्चित जैसा है, कल क्या होगा, हमारी मुलाकात किससे होगी और सबसे महत्वपूर्ण वह कहाँ और कैसे, किस रूप में मिलेगा, इसे लेकर अनिश्चितता बनी है । 'चाँद का मुह टेढ़ा है' इस कविता में कवि मुक्तिबोध कहते है -

नगर के बीचो-बीच
आधी रात-अँधेरे की काली स्याह
शिलाओं से बनी हुई
भीती और अहातों के, काँच- टुकड़े जमे हुए
ऊँचे-ऊँचे कन्धों पर
चाँदनी की फैली हुई सॅव लायी झालरे।
कारखाना-अहाते के उस पार
धूम्र मुख चिमनियों के ऊँचे-ऊँचे
उदगार-चिन्हाकार-मीनार ।[9]

'चाँद का मुह टेढ़ा है' इस कविता में कवि नगरों में दिखाई देनेवाले अंधकार, गलियारों की बात

करते है । मुक्तिबोध हमेशा युग के उस चेहरे की तलाश करते हुए दिखाई देते हैं जो आज इतिहास के मलबे के नीचे दब गया है, मगर मरा नहीं । 1964 में 'चाँद का मुह टेढ़ा है' उनकी लम्बी कविताओं का एक संकलन निकला, किन्तु दुर्भाग्य की बात ऐसी प्रकाशित होने के पूर्व ही कवि का देहावसान हो चुका था । मुक्तिबोध की दृष्टि समाज-केंद्रित रहती थी । अर्थात वे इतिहास, संस्कृति और सभ्यता पर विशेष ध्यान देते हुए उससे सम्बंधित अपनी अभिव्यक्ति देते थे । अपने विचारों को प्रकट करते थे । मुक्तिबोध की सबसे लम्बी कविता 'अँधेरे में' समाज की मानसिकता को भी प्रस्तुत करती दिखाई देती है । आधुनिक कवियों में विशेष रूप से मुक्तिबोध आधुनिक भाव-बोध के कवि कहे जाते है । जिनका समग्र साहित्य किसी दल-विशेष, कट्टर मतवाद या फिर धारा-विशेष से प्रभावित नहीं रहा है । 'ब्रम्हराक्षस' कविता में कवि ब्रम्हराक्षस की भूमिका और स्थिति को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में देखते हैं । जिनमें विशेष रूप से कवि ने अपना स्वयं का अर्थात व्यक्तिगत विजन देकर उसे व्यष्टि और समष्टि दोनों की ट्रेजडी का प्रतीक बना दिया है ।

शहर के उस ओर खंडहर की तरफ़
परिव्यक्त सूनी बावड़ी
के भीतरी
ठंडे अँधेरे में
बसी गहराइयाँ जल की
सीढ़ियाँ डूबी अनेकों
उस पुराने घिरे पानी में.....
समझ में आ न सकता हो
कि जैसे बात का आधार
लेकिन बात गहरी हो ।[10]

अर्थात ब्रम्हराक्षस की बावड़ी का भूगोल विचित्र तथा बड़ा सहस्यमय रहा है । कवि मुक्तिबोध व्यक्तिवादी न होते हुए जनवादी थे । प्रगतिवादी विचारधारा के वे तन-मन से प्रचार करना चाहते थे । 'अँधेरे में' काव्य के प्रथम खंड के आरंभ में प्रगतिवादी भाव सत्य का अपूर्ण साक्षात्कार संकलित है । बस अपूर्ण साक्षात्कार को 'नहीं जाना जाता है' 'नहीं देता दिखाई' आदि पंक्तियों से कवि ने व्यंजित किया है । मूल उद्वेगों और अनुरोधों की मशाल उस भाव-सत्य का पूर्ण साक्षात्कार करवाती है ।[11]

अर्थात सौंदर्य-प्रतीति की विफलता ही पहले खंड में वर्णित या व्यंजित मिलती है ।

जिन्दगी के.....
कमरों में अँधेरे
लगाता है चक्कर
कोई एक लगातार;
आवाज़ पैरों को देती है सुनायी
बार-बार... बार-बार,
वह नहीं दिखता।.....नहीं ही दीखता,
किन्तु, वह रहा घूम
तिलस्मी खोह में गिरफ्तार कोई एक;
भीत-पार आती हुई पास से,
गहन रहस्यमय अन्धकार-ध्वनि-सा ।[12]

मुक्तिबोध की 'अँधेरे में' कविता प्रमुखता से पूँजीवादी का जनसामान्य का शोषण है, जो लोग दिन में सफेद पोशाख पहनकर रात्रि में गुंडे बनकर आम जनता का जीवन त्रासदी से भर देते है । इसमें मुक्तिबोध प्रतीक, बीम्ब एवं फैंटेसी का सटीक प्रयोग करते है । यदि हम मुक्तिबोध के समग्र साहित्य का जब ठीक से अवलोकन करते है तो देखते है की, जो बात उस समय मुक्तिबोध कहते दिखाई दे रहे थे वह आज इक्कीसवीं सदी के दौर में भी मौजूद है । आज भी समाज की वह संकीर्ण मानसिकता पूरी तरह से कहाँ बदली है ।

जो स्थिति 'अँधेरे में' कविता में निहित है, वह आज भी दिखाई देती हैं । उसमें प्रासंगिकता दिखाई देती है । अभिव्यक्ति के खतरों को लेकर उस सन्दर्भ में अपनी बात रखते हुए नन्दकिशोर नवल कहते हैं, यहाँ मुक्तिबोध ने एक खतरे से आगाह किया है । वह ख़तरा यह है कि अभिव्यक्ति के संघर्ष में बार-बार असफलता मिलते देखकर और नए अभिव्यक्ति रूपों को सामाजिक मान्यता न प्राप्त होने से कभी-कभी रचनाकार का आत्मविश्वास लड़खड़ा जाता है, जिससे वह संघर्ष-विमुख और अंतत: रचना-विमख भी हो जाता है । रचनाकार अपने संघर्ष में सफल हो, इसके लिए उन्होंने 'अभिव्यक्ति के अभ्यास' को विशेष महत्व दिया है और उसे कलाकार का 'मुख्य कर्तव्य' कहा है ।[13]

कवि मुक्तिबोध के व्यक्तित्व की यह विशेषता रहीं है कि, वह मनुष्य-मनुष्य में कभी अंतर नहीं करते । फिर वह विश्व में कहीं भी, किसी भी कोने में बसा हो । समस्त मानव जाति के सुख दुःख यथा लक्ष्य एक ही है । इस संदर्भ में कवि प्रतिपादन करते हुए कहता है-

चाहे जिस देश, प्रांत पुर का हों
जन-जन का चेहरा एक ।
एशिया की,यूरोप की, अमरीका की
गलियों की धूप एक
कष्ट दुःख संताप की
चेहरों पर पड़ी हुई झुर्रियों का रूप एक ।
जोश में यो ताकत से बंधी हुई
मुट्ठियों का एक लक्ष्य
पृथ्वी के गोल चारों ओर के धरातल पर
है जनता का दल एक, एक पक्ष । [14]

एक जगह मुक्तिबोध मुक्ति और सौंदर्यानुभूति की बात करते हुए कहते हुए उनकी भूमिका स्पष्ट करते हुए मुक्तिबोध लिखते हैं- कलात्मक चेतना का विस्तार रचनाकाल तक सिमित नहीं, वरन मुख्यत: उस काल के बाहर होता है । रचनाकाल और सौंदर्यानुभूति एक दूसरे के पर्याय हो भी सकते हैं, नहीं भी हो सकते । मुख्या बात यह है कि सौन्दर्यानुभूति का काल मुख्यत: रचनाकाल के बाहर ही होता है । दूसरे शब्दों में, कलात्मक चेतना का विस्तार जीवन-जगत में विचरण करते हुए, संवेदनात्मक क्रिया-प्रतिक्रिया करते है हुए, होता है ।[15]

निष्कर्ष

निष्कर्ष के रूप में हम मुक्तिबोध की कविताओं का अध्ययन करने के बाद तो यह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है कि, विशेष रूप से मुक्तिबोध पूंजीवादी लोगों द्वारा आम जनता के शोषण के प्रति आवाज उठाते हुए दिखाई देते है । मुक्तिबोध की लगभग सभी कविताएँ समाज में स्थापित ऐसे लोग जो दिखाई कुछ देते है, और कार्य कुछ और करते है । मुक्तिबोध ने अपनी कविताओं के माध्यम से समाज में प्रगतिशील जीवन मूल्यों की संकल्पना की बात की । मुक्तिबोध की कविताओं में संवेदनात्मक ज्ञान ज्ञानात्मक संवेदना में बदल जाता है । उनकी कविताओं में एक गहन वेदना की अनुभूति एवं अतृप्ति मिलती है, क्योंकि वे स्वयं वेदना के कवि बनने की कामना करने लगे थे । उनकी कविताओं में प्रतीक, बीम्ब, फैंटेसी के माध्यम से उन्होंने समाज में केन्दित समस्याओं को उजागर कर उन्हें दूर करने की बात की ।

सन्दर्भ सूची

1. सं. डॉ. गंगेश दीक्षित-गजानन माधव 'मुक्तिबोध': नव चिन्तन, शुभम पब्लिकेशन, 3ए-128, प्रथम तल, हंसपुरम, कानपुर-208021, संस्करण- प्रथम, 2018, ISBN : 978-93-83144-33-4, पृ.सं-अपनी बात
2. वहीं- पृ.सं-11

3. वहीं- पृ.सं-17
4. डॉ. सुमन सिंह-मुक्तिबोध के साहित्य में सामाजिक बोध,रोशनी पब्लिकेशंस, 110/138 जवाहर नगर, कानपुर-208012, संस्करण-प्रथम, 2011, ISBN : 978-81-910896-1-5, पृ.सं- 17
5. वहीं- पृ.सं-31
6. वहीं- पृ.सं-34
7. वहीं- पृ.सं-34
8. गजानन माधव मुक्तिबोध-चाँद का मुँह टेढ़ा है, भारतीय ज्ञानपीठ 18, इंस्टीटूशनल एरिया, लोदी रोड, नयी दिल्ली-110 003,संस्करण-पन्द्रहवाँ 2003, ISBN: 81-263-0823-0, पृ.सं-34
9. वहीं- पृ.सं- 52
10. वहीं- पृ.सं- 37
11. डॉ. शिवशंकर लधवे-मुक्तिबोध का रचना संसार, हिन्दी साहित्य निकेतन, 16 साहित्य विहार बिजनौर, ISBN: 81-89790-91-2, पृ.सं-36
12. सं. त्रिलोचन शास्त्री-मुक्तिबोध की कविताएँ, साहित्य अकादेमी, पुनर्मुद्रण: 2009, ISBN: 81-2600674-9, पृ.सं-23
13. सं. डॉ. गंगेश दीक्षित-गजानन माधव 'मुक्तिबोध': नव चिन्तन, शुभम पब्लिकेशन, 3ए-128, प्रथम तल, हंसपुरम, कानपुर-208021, संस्करण- प्रथम, 2018, ISBN : 978-93-83144-33-4, पृ.सं-111
14. सं. डॉ. गंगेश दीक्षित-गजानन माधव 'मुक्तिबोध': नव चिन्तन, शुभम पब्लिकेशन, 3ए-128, प्रथम तल, हंसपुरम, कानपुर-208021, संस्करण- प्रथम, 2018, ISBN : 978-93-83144-33-4, पृ.सं-94
15. अशोक चक्रधर-मुक्तिबोध की समीक्षाई, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 7/31, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण-पहली आवृत्ति: 2006, ISBN: 81-7119-367-6, पृ.सं- 110